तेरी मेरी उसकी बात

नमिता सिंह

इससे पहले कि आज एक बार फिर लेखक के सामाजिक सरोकारों पर बात की जाय, सामाजिक-राजनीतिक और साहित्यिक परिदृश्य पर चर्चा की जाय, सबसे पहले वयोवृद्ध लेखिका नयनतारा सहगल के साहस को कोटिशः सलाम। उन्होंने देश के वृहद लेखक समाज का मौन तोड़ते हुए लेखकीय अभिव्यक्ति और विचारों की स्वतंत्रता के लोकतांत्रिक और संविधान प्रदत्त अधिकार के लिये स्वर मुखर करने की पहल की है जिस पर मौजूदा व्यवस्था द्वारा लगातार प्रहार किया जा रहा है।

लगभग पच्चीस सालों से सांप्रदायिक विद्वेष का वातावरण निर्मित कर सत्ता-राजनीति की जो शुरूआत हुई उसकी परिणति वर्तमान में वैचारिक असहमति के कारण होने वाली हत्याओं में दिखाई दे रही है। सांस्कृतिक वर्चस्ववाद का यह वातावरण आज अचानक नहीं बन गया है। दरअसल समाज में प्रतिरोध की शक्तियाँ लगातार क्षीण से क्षीणतर हुई हैं। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के नाम पर घृणा और अलगाव का वातावरण निर्मित होता रहा है। राष्ट्र के विकास के लिये आज विज्ञान और टैक्नोलोजी को नयी ऊँचाइयों पर पहुंचाने की कोशिश हो रही है क्योंकि विज्ञान सम्मत इस युग में इसे आर्थिक उन्नति और विकास का संवाहक समझा जाता है। इसके विपरीत दूसरी ओर घोर अवैज्ञानिक वातावरण बनाने की पूरी छूट अंध धार्मिक संगठनों को मिल रही है जो अपनी आक्रामक अराजकता के बलबूते कला-संस्कृति और साहित्य की बौद्धिक विरासत को नष्ट कर रहे हैं।

अफ़गानिस्तान के बामियान में शताब्दियों पुरानी बुद्ध की विशाल प्रतिमा को तालिबान ने अपने शासन के दौरान नष्ट कर दिया। अभी हाल में सीरिया के पलमायरा शहर में दो हज़ार वर्ष से भी अधिक पुराने मंदिरों को इस्लामिक स्टेट के आतंकियों ने बम से उड़ा दिया। पूरा विश्व इन ऐतिहासिक इमारतों के ध्वस्त होने से स्तब्ध रह गया। पड़ोसी बांग्ला देश में कट्टर मुस्लिम संगठन वहां की सरकार के विरुद्ध लगातार गतिविधियाँ कर रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों में बड़ी संख्या में अपने विचारों और लेखन के कारण अनेक पत्रकार और सोशल मीडिया में सक्रिय ब्लॉगर मारे जा चुके हैं। पाकिस्तान में तो देश विभाजन के बाद और विशेष रूप से अफ़गानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के बाद उसके खिलाफ तालिबानों के लिये पश्चिमी देशों से मिलने वाली विशाल सहायता के बलबूते जो बंद दिमाग वाले कट्टरपंथी तालिबानों की जमात पैदा हुई उसने असहिष्णुता और हिंसा की नयी मिसालें प्रस्तुत कीं। वहां 'ईशनिंदा' जैसे कानून में सुधार कर उसे तर्कसंगत बनाने की हिमायत करने वाले गवर्नर सलमान तासीर की दिन-दहाड़े हत्या कर दी जाती है। स्वतंत्र लेखन करने वाले पत्रकार मारे जाते हैं। प्रत्येक धार्मिक व्यवस्था में स्त्री सबसे नीचे के पायदान पर होती है और स्त्री-पुरुष समानता जैसी कोई अवधारणा वहां नहीं होती। इसीलिये पाकिस्तान के सीमांत इलाके में लड़कियों के स्कूल नष्ट कर दिये जाते हैं और स्कूल जाने की ज़िद करने वाली मलाला गोलियों से घायल होती है।

अपने यहाँ भी कुछ ऐसा ही वातावरण बनाने की कोशिश की जा रही है। अंधविश्वास और अवैज्ञानिकता का विरोध करने वाले डॉ. नरेन्द्र दाभोलकर की हत्या हुई और भुला दी गयी। इससे उत्साहित संकीर्णतावादियों की हिम्मत बढ़ी और राजनीति में तथा सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में सक्रिय और लेखक

गोविन्द पानसारे की भी उसी सहजता से हत्या हो गयी। प्रतिष्ठित विद्वान और कन्नड़ लेखक कलबुर्गी भी इसी तरह मार डाले गये। इतना ही नहीं, उनकी हत्या का विरोध करने वाले अन्य लेखकों को धमकियाँ दी जाने लगीं। सत्ता पक्ष पहले भी बयान देकर चुप था और अब भी केवल बयान आये। नागर समाज का प्रतिरोधी स्वर मुखर हुआ तो अपराधी पकड़े जाने लगे। अपराधियों की पहचान सनातन संस्था के पदाधिकारियों के रूप में हुई जो समाज के स्वयमभू संचालक और निर्णयकर्ता की भूमिका निभाते रहे हैं।

कोई व्यवस्था अगर असहमति का अधिकार अपने चिंतकों, कलाकारों, लेखकों, बुद्धिजीवियों के अलावा अपने सामान्य जन को भी नहीं देती तो वह लोकतांत्रिक व्यवस्था नहीं है। प्रजातंत्र में संविधान हमारे जीने की गारंटी देता है। सम्मानजनक रूप से जीने का, अपने रहन-सहन, आस्था पद्धति का, वैचारिक स्वतंत्रता का अधिकार देता है। आज 'गो हत्या विरोध' को मुद्दा बनाकर जिस तरह हिंसात्मक वातावरण बनाया जा रहा है और हत्यायें हो रही हैं वह आने वाले समय की भयावहता की ओर संकेत करता है। मनुष्य के जीवन का आज कुछ भी मूल्य नहीं। शरारतपूर्ण अफ़वाहों के आधार पर एक आदमी की पीट-पीटकर हत्या कर दी जाती है। उसका पुत्र मरणासन्न अवस्था में पहुंचा दिया जाता है और घर को तहस-नहस कर दिया जाता है। अखबार की खबरें बताती हैं कि इस लोमहर्षक कांड को संचालित करने वाले तथा अफवाह फैलाने वाले दोनों युवक केंद्र की सत्ताधारी पार्टी से जुड़े एक स्थानीय नेता के पुत्र हैं। मंतव्य स्पष्ट समझ में आता है भविष्य में होने वाले प्रदेश के चुनाव। दो-तीन साल पहले मुजफ़्फनगर में ऐसी ही हिंसा और सांप्रदायिकता का खेल हुआ था। सांप्रदायिकता के इस खेल में संख्या बल ही निर्णायक होता है और फिर चुनाव में जीत की गारंटी देता है। यह फार्मूला अब फिर आजमाया जायेगा।

सरकारें किसी भी दल की हों, सभी दोहरे चरित्र की हैं। वोट की राजनीति और अवसरवाद दलों की रणनीति बन जाती है। तब जनता ज्यादा समझदारी दिखाती है। गुजरात की गुलबर्ग सोसायटी में कांग्रेस के सांसद की नृशंस हत्या हो गयी लेकिन कहीं पर अपेक्षित आक्रोश नहीं था और न ही प्रतिरोध था। मुजफ़्फनगर में जो हुआ उसमें भी सत्ता-व्यवस्था का मौन ही पलड़े बदलता रहा। इस दिव्य मौन का खामियाजा भी दलों ने भुगता जो पिछले लोकसभा चुनावों में तथा अनेक प्रदेशों के विधानसभा चुनावों में दिखाई दिया।

सामाजिक न्याय का उत्तरदायित्व राज्य-व्यवस्था का है। दिलचस्प है कि सर्वोच्च राज्याध्यक्ष भी आज तथाकथित धार्मिक-सांस्कृतिक संगठनों के छुटभैये नेताओं के बयानों के शिकार हो रहे हैं। उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी अगर एक अकादमिक सभा में प्रत्येक नागरिक को संविधान प्रदत्त जीवन के अधिकार की बात करते हैं तो उन पर तुरंत आरोप लग जाता है कि वे मुस्लिम समुदाय के नेता के रूप में बात कर रहे हैं। इसी तरह योग दिवस पर मानो नेताओं की नज़र इस पर थी कि कौन सार्वजनिक रूप से योग करने आया और कौन नहीं और फौरन दूसरे दिन बयान जारी कर दिया गया कि उपराष्ट्रपति योग करने नहीं आये। यह अलग बात है कि अगले दिन स्पष्टीकरण आया कि प्रोटोकोल के तहत वे इस कार्यक्रम में आमंत्रित नहीं थे।

हिन्दू धर्म और संस्कृति की वृहद ऐतिहासिक परंपरा है। यहां शाक्त हैं तो वैष्णव संप्रदाय के साधक भी हैं। कृष्ण भक्ति के साथ अवतारी राम हैं तो शैव परंपरा भी है। आर्यों ने सूर्य, वरुण, अग्नि, उषा जैसी

प्रकृति की शक्तियों की आराधना की तो द्रविड़ संस्कृति के आराध्य भी अपनी उपासना पद्धति में समाहित किये। यज्ञों में देवमालाओं के आख्यान हैं। पशुबलि आधारित यज्ञों की प्राचीन परंपरा यहां थी जो हाल-फिलहाल के वर्षों तक अनेक मंदिरों और उपासना समूहों में विद्यमान रही है। चार्वाकों की नास्तिक परंपरा भी यहां थी। बौद्ध धर्म अवतारवाद और जन्म-पुनर्जन्म के विरोध में सामान्य जन के धर्म के रूप में प्रचलित हुआ। यह अलग बात है कि आज अवतारों की शृंखला में बुद्ध भी मंदिरों में स्थापित हैं। एक पृथक पंथ के रूप में जैन धर्म भी हिन्दू संस्कृति का हिस्सा है। यह बहुलतावाद हिन्दू धर्म और संस्कृति की विशेषता है जिसने इसे उदार बनाया और विस्तार दिया। यह उदारता ही समाज की शक्ति थी जिसने सहस्त्राब्दियों पूर्व से होने वाले विदेशी आक्रमणकारियों से अपनी रक्षा की और अपने समावेशित चरित्र के कारण अपनी सांस्कृतिक-सामाजिक परंपरा को अक्षुण्ण रखा तथा इसे निरंतर नया रूप देते हुए विस्तार किया। यूनान के सिकंदर से लेकर शक, हूण, कुषाण, गुर्जर जैसी जातियाँ यहाँ आक्रमणकारी के रूप में आईं। कुछ लूट-पाट कर लौट गयीं और कुछ यहीं के जन-जीवन में रच-बस गयीं। इसी तरह 16वीं सदी में मुगल भारत में आये और वे भी यहीं के होकर रह गये। उनकी संस्कृति और सभ्यता का भी भारतीय संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा। चिंतन और विचार की स्वतंत्रता और उदार जीवन पद्धति हिन्दू समाज की विशेषता रही है। इसीलिये विश्व की सभ्यताओं में इसका महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

आज अनगिनत जीवन पद्धतियों, विविध आस्थाओं वाले समाज को कुछ समूह एक सामी (सेमेटिक) धर्म के रूप में बदलना चाहते हैं। यानि केवल एक ही आस्था रूप, एक ही किताब से संचालित होने वाला धर्म जिसका एक ही रूप हो, एक ही जीवन पद्धति हो और बताये गये ईश्वर के रूप और आस्था पर कोई प्रश्न, संशय और कोई विचार न हो। धार्मिक कट्टरवाद जो अपने नागरिकों को विचार-चिंतन और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं देता, विकास नहीं कर सकता। नयी वैज्ञानिक खोजें या सामाजिक विज्ञान में नया दर्शन या सैद्धांतिक चिंतन संकीर्ण समाज में संभव ही नहीं है। पड़ोसी पाकिस्तान जो कट्टरवादी आतंकवाद की गिरफ़्त में है वहां के किसी बड़े वैज्ञानिक, समाजशास्त्री, विचारक का नाम पिछले पचास-साठ साल में नहीं सुना गया। अपने देश में अपार संभावनाएं हैं। विशेष रूप से स्वतंत्रता के बाद विज्ञान और साहित्य-संस्कृति के क्षेत्र में हमारी पूर्व सरकारों ने बहुत ध्यान दिया। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक भविष्य दृष्टा के रूप में वैज्ञानिक संस्थानों की सुदृढ़ नींव रखी और विकास किया। साहित्य अकादमी के रूप में साहित्य-संस्कृति को नये भारत की अस्मिता के रूप में स्थापित कर स्वतंत्र लेखन-चिंतन के लिये मार्ग प्रशस्त किया। आज देश के परंपरागत ज्ञान को आधुनिक विज्ञान पद्धतियों से जोड़कर विकसित करने की जरूरत है। चीन ने इस दिशा में बहुत काम किया है। वहां की महिला वैज्ञानिक डॉ. यूयू ने मलेरिया के उपचार में प्रयोग की जाने वाली परंपरागत वनस्पति 'वर्मवुड' से बरसों की मेहनत के बाद मलेरिया की दवा बना दी और नोबेल पुरस्कार की हकदार हो गयीं। हमारे यहां आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति है जिसे आधुनिक रूप दिया जा सकता है। ''सारा ज्ञान विज्ञान हमारे देश में पहले से ही मौजूद था'' जैसी धारणा भी संकीर्ण बनाती है और ज्ञान के रास्ते बंद करती है। इस संकीर्णता और अज्ञान से आत्म मुग्ध कुछ लोगों को अधिकार मिल जाता है कि वे अपने नज़रिये से पूरा समाज, पूरी व्यवस्था को संचालित करें। इसीलिये जब चाहे अनपढ़-अराजक लोगों का छोटा समूह जाकर किसी फिल्म को रूकवा देता है कि उससे समाज की बदनामी होगी। बिना पढ़े या जाने बिना किसी किताब, किसी पेंटिंग के विरुद्ध हंगामा हो जाता है। संस्कृति की रक्षा

के नाम पर साथ घूमते लड़के-लड़कियों की पिटाई होती है तो किसी लेखक, कलाकार को प्रताड़ित किया जाता है। विशद अकादमिक अध्ययन और प्रामाणिक शोधकार्यों को कूड़ेदान में डालकर अपने मंतव्य के अनुसार इतिहास को व्याख्यायित करने की कोशिश होती है। हजारों साल पहले भी, अनेक बार विश्व के अनेक हिस्सों में विकसित सभ्यताएं और बौद्धिक केन्द्र विचार शून्य आक्रमणकारियों द्वारा सत्ता और ताकत के बल पर नष्ट कर दिये गये जिनका इतिहास साक्षी रहा है।

पिछले समय की इन घटनाओं पर प्रभावी रोकथाम की कार्यवाही न होने से भय और आशंका का वातावरण बनना स्वाभाविक है। तोप के मुकाबिले फिर कलम ही प्रतिरोध का साधन बनती है। लेखक-साहित्यकार जनभावनाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। यूं बाजारवादी संस्कृति का मध्यवर्ग पर सर्वाधिक प्रभाव दिखाई देता है। आज तो पुरस्कारों-सम्मानों का पैमाना ही बदल गया है। कितनी दौड़-भाग, लॉबिंग होती है, कैसे-कैसे संपर्क साधे जाते हैं। पिछले बीस-पच्चीस सालों से साहित्यिक संस्थाओं की स्वायत्तता और कार्यशैली पर भी सवाल उठते रहे हैं। सच तो यह है कि व्यापक पाठक-वर्ग ही किसी लेखक-रचनाकार को असली सम्मान देता है और पाठकीय मान्यता ही उसे जीवित रखती है। लेखक मानव हृदय का शिल्पी है तो समाज की आत्मा है। साहित्य जन-आकांक्षाओं का, उसके सुख-दुख, पीड़ा का प्रतिबिंब है। जन-प्रतिरोध का संवाहक है। आज देश के कोने-कोने से साहित्यकार अगर अपने लेखक बंधुओं पर होने वाले हमलों से आहत और चिंतित हैं तथा विरोध कर रहे हैं तो इस पर सवाल क्यों उठाये जा रहे हैं। साहित्य अकादमी सम्मान लौटाना प्रतीकात्मक है प्रतिरोध का जो नरेंद्र दाभोलकर, गोविंद पानसारे और कलबुर्गी के साथ-साथ दादरी के निरीह अखलाक की हत्या जैसी घटनाओं से उपजा है। औपनिवेशिक भारत में जलियांवाला बाग हत्याकांड के बाद रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदत्त सम्मान विरोध स्वरूप लौटा दिया था। आपातकाल में भी नयनतारा सहगल तथा अन्य अनेक लेखकों ने इसी प्रकार से विरोध किया था। आज साहित्यकार-लेखक अपने लेखकीय अधिकार के लिये, वैचारिक स्वतंत्रता के लिये, मानवीय अस्मिता और जीने के अधिकार की सुरक्षा की मांग कर रहे हैं। लेखकों की यह एकजुटता और सामूहिक प्रतिरोध देश में असहिष्णुता का वातावरण बनाने की कोशिशों के विरोध में है, क्षरण होती मानवीय गरिमा की रक्षा के लिये और अभिव्यक्ति की आज़ादी के लिये है।

28-एम.आई.जी.
अवन्तिका-।, रामघाट रोड
अलीगढ़